पेरिस, क्रिसमस (नोयेल)
२५ दिसम्बर, २००५

संदेश संख्या – ८५

महामुद्रा

मुद्रा शरीरी–चेतना की विशेष घटना को इंगित करती है जिसे शरीर विशिष्ट संकेत या भाव–भंगिमा द्वारा अभिव्यक्त करता है । मुद्राओं का अनुकरण कर आध्यात्मिक पद एवं प्रतिष्ठा की कल्पना करना अत्यन्त दुःखद है किन्तु हमलोग अहंकार और उसके आकांक्षाओं के अन्तहीन प्रयत्नों के कारण प्रायः उसमें फँस जाते हैं ।

उदाहरण के लिए, खेचरी मुद्रा को लिया जाय । 'ख' का अर्थ है–आकाश और 'खेचरी' का अर्थ है – चेतना का आकाश की तरह निर्मल रहना यद्यपि विचार रूपी बादल उसमें उत्पन्न और समाप्त होते रहते हैं । वासना एवं मोह से मुक्त चेतना खेचरी कहलाती है । हमारी समस्यायें बनी रहती हैं क्योंकि हमारी चित्तवृत्ति प्रयत्नों में सतत लिप्त रहती है और इस तरह हमारा मस्तिष्क तो भरा रहता है परन्तु हृदय खाली होता है । इसी कारण हमने आकाश की असीम शून्यता, प्रेम और चैतन्य खो दिया है जबकि यही सब कुछ है । यदि कोई यह सब स्वाध्याय के दौरान प्राप्त अन्तर्दृष्टि से समझने में सक्षम नहीं है; तब दूसरा सबसे अच्छा उपाय है – बहुत सारी तालव्य–क्रिया करना जो स्वयं में बहुत लाभकारी है । इससे गले में स्थित घंटी के पीछे जिह्वा को खड़ा (ऊर्ध्व स्थिति) करने में सहायता मिलती है और इसे ही खेचरी मुद्रा के नाम से जाना जाता है। जिह्वा की यह ऊर्ध्व स्थिति शान्ति लाती है क्योंकि उसके क्षैतिज–स्थिति से निकलने वाली विचार रूपी कंपन तब बहुत कम हो जाती है (भौतिक विज्ञान का नियम) । लेकिन खेचरी मुद्रा लगने पर भी मूलभूत समझदारी (स्वाध्याय) के बिना मन पहले की ही तरह अपने सभी प्रदूषणों, मनोविकृतियों, पूर्वाग्रहों, आडम्बरों एवं भ्रांतियों में क्षुद्र बना रहता है ।

महामुद्रा को महा अर्थात् परम, सर्वश्रेष्ठ इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह चेतना की वह अवस्था है जिसमें जीवन मन के प्रदूषण से मुक्त होता है। जीवन और प्रेम का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रमाण है – काम ऊर्जा और इन्द्रियजन्य प्रत्यक्षबोध। यह काम–ऊर्जा पवित्र है क्योंकि जीवन पवित्र है, जबकि मन कामुकता और इन्द्रियलोलुपता (वासना) है जो कि मनोविकृति है और जीवन का शत्रु है । जिस मुद्रा (घटना) में काम–ऊर्जा (जीवन) कामुकता (मन) के बोझ से मुक्त हो वह महामुद्रा कहलाती है यद्यपि यह कामुकता अनुबंधित प्रतिबिम्ब के रूप में कभी–कभी आ–जा सकती है। यह वस्तुतः महान है क्योंकि यह मन के गलाघोंटू पकड़ से जीवन की मुक्ति है। यह मन का विस्फोट है तथा परमानन्द की प्राप्ति है । काम–ऊर्जा एक गहन प्रक्रिया है जबकि कामुकता घटिया अश्लीलता। काम–ऊर्जा जीवन्त, शक्ति–युक्त और श्रेष्ठ है जबकि कामुकता अश्लील दुतापूर्ण और नग्न होता है। महामुद्रा में मन नियन्त्रित नहीं होता बल्कि सहजावस्था में होता है और वही सुव्यवस्था, समन्वय तथा शान्ति है।

नियन्त्रित मन वासना से पूर्ण होता है । यह अगले जीवन में कामवासना संबंधी पुरस्कारों एवं आध्यात्मिक पुरस्कारों के लोभ में आ जाता है । इसी कारण, एक विशि धार्मिक विश्वास–पद्धति में, तथाकथित शहीदों (आतंकवादियों एवं आत्मघाती बमवर्षकों) को 'स्वर्ग' में उनकी इच्छा–पूर्ति हेतु ७२ हूर (काली आँखों एवं सफेद चमड़ी वाली कुँवारियाँ) का वादा किया जाता है । लेकिन पुरुषों द्वारा बनाये गए धर्मशास्त्र में इसके विपरीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अतः महिला शहीदों को साथी के रूप में ७२ पुरुष फरिश्तों का वादा नहीं किया जाता। उन्हें स्वर्ग में अधिक से अधिक पवित्र एवं सुन्दर परी बनने का ही आश्वासन दिया जाता है ।

एक बार शिवेन्दु को लन्दन में एक भव्य मंदिर देखने के लिए आमन्त्रित किया गया जिसे एक भारतीय धार्मिक–पंथ द्वारा निर्मित किया गया था । वहाँ वार्ता के दौरान मंदिर के प्रधान ने बताया कि इस मंदिर के उद्घाटन के लिए भारत से उनके पंथ–प्रधान की हवाई–यात्रा की विशेष–व्यवस्था इस प्रकार की गई थी कि उस उड़ान के दौरान हवाई जहाज में न कोई महिला यात्री थी और न ही कोई महिला कर्मचारी । ऐसा इसलिए, क्योंकि उनके प्रधान ने १० वर्ष की उम्र के बाद से ही अर्थात् पिछले ७० वर्षों (तब वे ८० वर्ष के थे) में कभी–भी किसी महिला का मुख नहीं देखा है । वस्तुतः पंथ के सदस्यों द्वारा इस विकृत–वासना की पूजा कल्पना एवं अज्ञानता के कारण होती है । सभी विपरीत अपने विपरीत के अवयवों को भी स्वयं में समाहित किए रहते हैं । इस सत्य को मन द्वारा ढँक दिया जाता है क्योंकि मन सुरक्षा के लिए समूह–विशेष से जुड़ा रहना चाहता है तथा मानसिक रूप से निर्भर रहने की उसकी सतत आवश्यकता होती है । ईश्वर को धन्यवाद है कि भारतीय पंथवाद में मरने–मारने की संस्कृति नहीं के बराबर है, जब तक कि प्रतिक्रिया और बदले की भावना को अत्यधिक हवा न दी जाय और भारतीय धार्मिक परम्परायें खिलाने एवं खाने को ध्यान में रखकर बनाई गई हैं ।

महामुद्रा मनुष्य के शरीरी–चेतना का पूर्ण आयाम है । यह चेतना के विभिन्न खण्डों में एक मौलिक परिवर्तन है। लेकिन जो इस स्वाध्याय में महामुद्रा को नहीं समझ सकते, उनसे आशा की जाती है कि वे क्रिया–योग दीक्षा–कार्यक्रम में बताये गए तप से संतुष्ट रहेंगे । यह मुद्रा स्वाधिष्ठान चक्र (नीचे से क्रम संख्या–२) पर कार्य करती है और यह काम–ऊर्जा को काम–वासना रूपी विकार में बदले बिना उसकी रक्षा में सहायक होती है। यह समझदारी और संतोष को बढ़ाती है न कि काम–वासना और भ्रांति को।

महामुद्रा में समझदारी की ऊर्जा को निम्नलिखित २० श्लोकों में बहुत सुन्दर ढंग से निरूपित किया गया है। कुछ कमकाण्डीय श्लोकों, जिनमें बौद्ध–आह्वान वर्णित हैं, को यहाँ नहीं लिया गया है। इनकी रचना बंगाल में हुई लेकिन इन्हें परिरक्षित रखा गया तिब्बत में। प्रक्रिया व्यक्तित्व से अधिक महत्वपूर्ण है । इसीलिए इन श्लोकों में निहित शिक्षा का नाम और धर्म के विस्तार में गए बिना नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है। ये श्लोक वस्तुतः विस्फोट हैं। शिवेन्दु को भविष्य में होने वाले कुछ रिट्रीटों में, इन विस्फोटों पर बोलने का अवसर मिल सकता है ।

१. क्या आकाश कहीं अवलंबित है ? किस पर है यह अवलंबित ?
आकाशवत, महामुद्रा भी नहीं है किसी पर अवलंबित।
अमिश्रित शुद्धता की सततता में स्थिर रहकर करते जब विश्राम
तुम्हारे बंधनों का खुलना और मुक्ति है निश्चित ।।

२. शून्य आकाश में गहनता से निहारने पर, दृष्टि अवरूद्ध हो जाती है,
वैसे ही, जब मन स्वयं मन को ही निहारता है,
असम्बद्ध और अवधारणात्मक विचारों की धारा रुक जाती है,
और प्राप्त हो जाता हे परम प्रबोध ।।

३. जैसे प्रातःकालीन कुहासा विरल वायु में विलीन हो जाता है,
कहीं नहीं जाता किन्तु वहाँ रहता भी नहीं ।
वैसे ही, मन–निर्मित सभी अवधारणात्मक–तरंगें,
विलीन हो जाती हैं, जब तुम अपनी चेतना के सच्चे स्वभाव को देखते हो।

४. निर्मल आकाश–न रंग है न आकृति ।
न इसे काला कर सकते हैं और न ही श्वेत ।
इसी तरह, रंग और आकृति–दोनों के परे है, चैतन्य की प्रकृति,
इसे भी दूषित नहीं किया जा सकता, कम हो चाहे–काला या श्वेत ।

५. आकाश यद्यपि ''शून्य'' कहा जाता है
वस्तुतः है यह–अकथनीय;
चैतन्य का स्वभाव यद्यपि कहा जाता है – ''दिव्य प्रकाश''
वस्तुतः इसका प्रत्येक आरोपण है–आधारहीन शाब्दिक कल्पना ।

६. चेतना का मौलिक स्वभाव है आकाशवत्
सभी वस्तुओं में है व्याप्त और समाविष्ट यह सूर्य प्रकाशवत्
स्थिर हो जाओ और निष्कपट सहजता में करो विश्राम
शान्त हो जाओ, देखो ध्वनि और प्रतिध्वनि की गूँज को,
फिर देखो, शान्त मन से
मन निर्मित सारा संसार समाप्त होता हुआ पाओगे ।

७. सरकण्डे के तने की तरह, शरीर है तत्वतः खाली,
मन जब हो जाता है, निर्मल आकाशवत्,
विचारों की दुनिया से पूर्णतः परे,
न छोड़ता न पकड़ता, अपने मौलिक स्वभाव में करता विश्राम,
ऐसा प्रयोजन रहित मन ही महामुद्रा है,
और अभ्यास पूर्णता को प्राप्त होता है जब,
उपलब्ध हो जाता है परम प्रबोध तब ।

८. महामुद्रा का दिव्य प्रकाश, उद्घाटित नहीं हो सकता,
मंत्रवाद, परमिताज या त्रिपिटक के–
प्रामाणिक धर्मग्रन्थ–संग्रह या आध्यात्मिक पुस्तकों से।
वस्तुतः दिव्य प्रकाश आच्छादित है–अवधारणाओं एवं आदर्शों से ।

९. जब हो बौद्धिक अहंकार से मुक्ति और कट्टर सिद्धान्तों की अस्वीकृति,
सत्य हो जाता है उद्घाटित, प्रत्येक विचारधारा और धर्मशास्त्र का।

१०. मन के द्वैत के परे है – परमदृष्टि,
स्थिर और शान्त मन में होता – परमध्यान,
स्वतः स्फूर्त जो हो, वह है – परमकार्य
सभी आशाओं और निराशाओं का हो जाता जब अन्त,
प्राप्त हो जाता है – परम लक्ष्य, पूर्णत्व ।

११. चेतना स्वाभाविक रूप से है स्वच्छ, सभी मानसिक छवियों के परे,
बुद्धों के मार्ग पर चलने के लिए, किसी मार्ग का अनुसरण न करें,
परम – प्रबोध पाने हेतु किसी तकनीक का उपयोग न करें ।

१२. स्थित रहो सहजावस्था में,
जब ''कुछ भी पाना शेष न हो'' की अवस्था प्राप्त हो जाय,
महामुद्रा हो जाती है उपलब्ध ।

१३. वृक्ष अपनी शाखायें फैलाता है, फिर उसमें निकलते हैं पत्ते,
लेकिन इसकी जब जड़ कट जाती है, बिखर जाते हैं पत्ते ।
वैसे ही, जब मन का जीवन से हो जाता है विच्छेद
सूख जाती हैं शाखायें, संसार रूपी वृक्ष की ।

१४. एक दीप, हजारों युगों के अंधकार को जैसे है दूर कर देता,
वैसे ही, चैतन्य के दिव्य प्रकाश की एक झलक –
मिटा देती है, युगों का कम–बंधन और आध्यात्मिक अंधता ।

१५. मन की किसी भी विशिष्टता से,
नहीं जाना जा सकता है निर्मन का सत्य,
आवश्यक लगने वाली गतिविधियों में,
नहीं समझा जा सकता है प्रयत्न–शैथिल्य का अर्थ
जानना हो यदि प्रयत्न शैथिल्य और निर्मन का अर्थ
तो काट दीजिए मन को उसके मूल से
और करें विश्राम पूर्ण सजगता में ।

१६. मानसिक गतिविधि रूपी गंदे जल को स्वच्छ होने दो,
सकारात्मक और नकारात्मक – दोनों छवियों से रहो दूर,
केवल प्रत्यक्षबोध को रहने दो
बिना किसी जोड़ – घटाव के और यह दृश्य जगत है महामुद्रा ।

१७. हो जाता है विलय आवेग और भ्रांतियों का
जन्मरहित सर्वव्यापक चैतन्य में,
जब न होता अहंकार और करते विश्राम 'स्व' में ।
अतः हो जाने दो विलय 'मैं' का
और संसार संबंधी सभी अवधारणाओं का ।

१८. परम दृष्टि से खुल जाते हैं सभी द्वार
परम ध्यान पहुँचा देता है असीम गहराई के पार
परम कार्य होता है अप्रभावित, फिर भी होता है दृढ़
परम लक्ष्य है सहज होना, भय व आशा के पार ।

१९. मति यदि मंद है और इन निर्देशों का अभ्यास करने में भी
तुम हो असमर्थ,
तो पूर्ण सजगता से पकड़ो श्वास और प्रश्वास
स्थिर दृष्टि कर, मन को देखने का करो अभ्यास,
करो स्वयं को अनुशासित पूर्ण जागृति होने तक ।

२०. महामुद्रा की यह सारगर्भित शिक्षा
भाग्यशाली लोगों के हृदय में बस जाय,
मंगलकामना है यही ।

सचेतनता ही महामुद्रा है और इसका अर्थ है :
''हृदय पूर्ण, मन रिक्त ।
समझदारी पूर्ण, प्रयत्न शून्य ।''